REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.2331(UIF)
UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514
VOLUME - 7 | ISSUE - 2 | NOVEMBER – 2017

गुप्तकाल में मूर्तिकला का विकास

डॉ. नरेन्द्र सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर ,
प्राचीन भारतीय इतिहास एवं पुरातत्व,
विद्यान्त हिन्दू पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ.

प्राचीन भारतीय इतिहास में गुप्त काल को प्राचीन भारत का स्वर्ण काल कहा गया है,[1] क्योंकि तत्कालीन समय में भारत का राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, शैक्षणिक एवं कला के क्षेत्र में समग्र विकास हुआ। अगर हम राजनैतिक दृष्टि से देखें तो गुप्त काल में ऐसे चक्रवर्ती सम्राट हुए जिन्होंने पूरे भारत को एक सत्ता सूत्र में बांध दिया। आर्थिक रूप से विवेचन करे तो गुप्तकाल में कृषि, पशुपालन, व्यापार, वाणिज्य बहुत फला–फूला दिखाई देता है सामाजिक एवं धार्मिक रूप से भी देश बहुत सम्पन्न दिखाई देता है। किन्तु कला के क्षेत्र में क्रान्ति दिखाई देती है गुप्तकाल में। मन्दिर वास्तु कला का स्वर्णयुग गुप्त काल को निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है।[2] कला के क्षेत्र में इस समय चौमुखी विकास हुआ। पूर्व में आसाम के ब्रह्मपुत्र नदी घाटी से लेकर पश्चिम में सिंध के मीरपुर खास नामक स्थान तक तथा उत्तर में चोआ सौदान शाह से लेकर दक्षिण में सिलानवासल तक कला की चमक दिखाई देती है।[3]

उत्तर भारत में उस समय कला के प्रमुख स्थल कौशाम्बी, मथुरा एवं सारनाथ दिखाई देते हैं। माधुरी देसाई ने गुप्त काल को उत्तर भारतीय शैली कहा। अजन्ता, कन्हेरी, एलोरा में उत्तर भारतीय शैली की मूर्तियों के दर्शन होते हैं। उपरोक्त साक्ष्यों के आधार पर हम गुप्तकालीन मूर्ति कला का अध्ययन कर सकते हैं। क्योंकि गुप्त काल की दृष्टि से बहुत ही समृद्ध था। गुप्तवंश के शासक धार्मिक रूप से वैष्णव धर्मावलम्बी थे, इसलिए अत्यधिक मात्रा में वैष्णव मूर्तियों का निर्माण शासकों ने करवाया था। किन्तु गुप्तकाल में बौद्ध, जैन एवं वैदिक धर्म से सम्बन्धित मूर्तियों का भी निर्माण कार्य कराया गया। बौद्ध धर्म से सम्बन्धित सारनाथ मूर्तिकला का प्रमुख केन्द्र था। तो जैन धर्म की मूर्तियां उस समय विदिशा से प्राप्त हुई। कहौम अभिलेख से पता चलता है कि मद्र नामक व्यक्ति ने जैन मूर्तियों का निर्माण करवाया था। गुप्त काल की कला शैली इतनी समृद्ध थी कि उनके अवसान के बाद भी 800 सदी ई0 तक गुप्त कला शैली जीवित बनी रही, जिसके दर्शन हमें, वाकाटक, शालकायन, प्रारम्भिक पल्ल्व, मैत्रक, औलिकर, तथा चालुक्यों की कला शैली में होते हैं। अपने व्यापक साम्राज्य विस्तार के कारण गुप्त काल की मूर्ति कला का जब अध्ययन करते हैं तो उसकी केन्द्रीय एवं क्षेत्रीय शैली के बीच सामंजस्य दिखाई देता है। जैसे–

1. गुप्त काल की कला सामग्री में मथुरा, कौशाम्बी, सारनाथ तथा मालवा की कला शैली में केन्द्रीय कला शैली का रूप परिलक्षित होता है।
2. गुप्तकाल में मूर्तिकला के निर्माण के केन्द्र लगातार बदलते रहे। सर्वत्र एक जैसी स्थित नहीं प्रतीत होती।
3. निर्माण के क्षेत्र में मालवा एवं कौशाम्बी का वर्चस्व दिखाई देता है।
4. चक्रवर्ती सम्राटों का मालवा से निकटता होने का लाभ दिखाई देता है। एक अभिलेख से पता चलता है कि गुप्त शासक चन्द्रगुप्त द्वितीय ने उदयगिरि

की एक गुफा में बराह की मूर्ति का निर्माण कराया था। इसमें बराह द्वारा पृथ्वी का उद्धार करने के दृष्य का अंकन है। गुप्त काल की कलाकृतियों में चन्द्रगुप्त द्वितीय की विजयों का अंकन भी मिलता है। रामगुप्त के शासन काल में पुष्पदंत एवं चन्द्रप्रभ की प्रतिमाएं बनायी गई।[4] गुप्त कालीन प्रतिमाएं एवं मूर्तियाँ उद्भव से लेकर अन्त तक मालवा में दिखाई देती है।

चक्रवर्ती गुप्त शासक वैष्णव धर्मानुयायी थे। इसलिए इस काल में विष्णु की मूर्तियाँ अधिकांश मात्रा में बनाई गई। मथुरा कला शैली में बनी विष्णु की मूर्तियों में विष्णु की बैकुण्ठ मूर्ति तथा हरिहर मूर्तियाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इनमें वैकुण्ठ मूर्ति अमरीका के वोस्टन संग्रहालय में सुरक्षित है। इसके अतिरिक्त विष्णु के अन्य अवतारों से सम्बन्धित मूर्तियों का निर्माण भी इस काल में दिखाई पड़ता है। जो इस प्रकार है– नृसिंह की मूर्तियाँ, उदयगिरि की कृति, वेसनगर की नृसिंह मूर्ति (ग्वालियर संग्रहालय) आदि विशेष उल्लेखनीय है। एरण की प्रतिमा पर निर्माणकर्ता का नाम भी अंकित है। देवगढ़ झाँसी के दशावतार मंदिर में कृष्ण जन्म, देवकी द्वारा वासुदेव को शिशु कृष्ण का समर्पण, वासुदेव द्वारा कृष्ण का मथुरा ले जाते हुए दृश्य का अंकन तथा बलराम की मूर्तियों का अंकन बहुत ही मनोहारी प्रतीत होता है। देवगढ़ मन्दिर के एक अन्य दृष्य में राम–सीता–लक्ष्मण का वनगमन, अहिल्या का उद्धार, अगस्त्य ऋषि के आश्रम में उनका सत्कार एवं लोपामुद्रा द्वारा सीता को शिक्षा की देवी के रूप में अकन बहुत ही मनोहारी है। शयन मूर्ति के रूप में विष्णु की शेषशायी विष्ण की रचना बड़ी मोचक है। गुप्तकाल में वैष्णव मूर्तिकला में विष्णु की लीलाओं का अंकन बहुत ही सुन्दर प्रतीत होता है। भगवान शिव की पूजा हेतु निर्मित शिवलिंग गुप्तकाल की सर्वोत्कृष्ट मूर्तियों में से एक है। खोहु, उँचेहरा, अतरियाखेड़ा (प्राचीन नागोद) नचना एवं मंदसौर के मुखलिंग भी गुप्त काल में बनाए गये। गुप्तकाल में आठमुख वाला शिवलिंग भी निर्माणकर्ता बनाते थे।[5] अधिक मात्रा में भगवान शिव की मूर्तियाँ भी बनवाई गई इनमें छः भुजाओं वाली शिव की मूर्ति बहुत मनोहारी है इस मूर्ति में शिव के पैरों के बीच घटवाद्य का अंकन मिलता है, यह मूर्ति सम्भवतः छठी सदी ई0 की है।[6] शिव के साथ–साथ गणेश एवं कार्तिकेय की मूर्तियाँ, उत्कृष्ट कारीगरी के साथ मूर्तिकारों के बनाई। इन मूर्तियों को देखकर भगवान शिव के लोकमंगलकारी रूप के दर्शन होते है।[7]

तत्कालीन उत्तर भारत में स्थित सारनाथ मूर्तिकला की दृष्टि से बहुत ही उल्लेखनीय स्थान रखता है। उस सारनाथ बौद्ध मूर्तिकला का प्रमुख स्थल था। गुप्त काल में यहाँ कई से स्तूप एवं विहार बनवाये गये। बाद में सारनाथ की मूर्तिकला ने मगध तथा बंग देश की पूर्वी शैली को स्थापित किया। सारनाथ की मूर्तिकला में भगवान बुद्ध की अनेक मूर्तियाँ बनवायी गयी जिन्हें देखकर यह कहा जा सकता है कि बुद्धिष्ट कला की जानकारी मूर्तिकारों को थी। भगवान बुद्ध की मूर्तियों पर छोटे–छोटे अभिलेख भी अंकित हैं। मूर्तियों पर 472–73 ई0 की तिथि लिखी है।[8] भगवान बुद्ध की अभयमुद्रा की मूर्ति, धम्मचक्रप्रर्वतन मुद्रा तथा भूमि स्पर्श मुद्रा की मूर्तियाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय है। बुद्ध भगवान की (एक मूर्ति) माथाकुँवर, कुशीनगर से मूर्तियाँ भी प्राप्त हुई हैं जिससे यह ज्ञात होता है कि इसका निर्माण 448–49 ई0 में हुआ होगा किन्तु इन पर कुषाण कालीन कला का प्रभाव भी परिलक्षित होता है।

गुप्तकाल में जैन धर्म से सम्बन्धित मूर्तियाँ भी अत्यधिक मात्रा में बनवाई गई। तीर्थकारों को ध्यानस्थ एवं खड़गासान मुद्रा में दिखाया गया है। महाराजाधिराज रामगुप्त के समय की मूर्तियाँ दुर्जनपुर से प्राप्त हुई हैं, जो आज मध्य प्रदेश के विदिशा संग्रहालय में सुरक्षित है। इन मूर्तियों पर मूर्तिकारों ने अभिलेख भी अंकित किए हैं।[9] बिहार के राजगृह से प्राप्त नेमिनाथ तीर्थंकर की मूर्ति चक्रवर्ती गुप्त द्वितीय के समय की मालूम होती है, इससे उसकी धार्मिक सहिष्णुता का प्रमाण मिलता है।[10] वैष्णव, बौद्ध, जैन धर्म से सम्बन्धित मूर्तियों के अतिरिक्त सूर्य, ब्रह्मा, गंधर्म, मुण्डेस्वरी आदि की मूर्तियाँ भी उल्लेखनीय है। पूर्वी क्षेत्र में गुप्तयुगनी कला के उदाहरण बिहार प्रान्त के शाहाबाद एवं राजगृह से प्राप्त होते हैं इस सम्बन्ध में मणियार मठ के स्मारक की मूर्तियों का उल्लेख यहाँ किया जा सकता है। ये मूर्तियाँ 350–500 ई0 के बीच बनवायी गई थी। पूर्वी क्षेत्र में उड़ीसा से गुप्तकाल की मूर्तियों की जानकारी नाममात्र ही मिलती होती है। भुवनेश्वर स्थित भारती मठ की कुछ मूर्तियाँ गुप्तकाल की मानी जा सकती हैं जिनमें लकुलीश, गणेश, कार्तिकेय तथा शिवपार्वती की मूर्तियां उल्लेखनीय है।[11]

गुप्तकाल में मध्य भारत की मूर्तिकला के प्रमुख के रूप में अपनी उपस्थित प्रकट करता है। एरणभी इस समय कला का प्रमुख केन्द्र बन गया था। चौथी सदी ई0 में यहाँ मूर्तियों का निर्माण होता था। इस समय की मूर्तियों पर धार्मिक अभिप्राय का प्रभाव कम है ज बकि अलंकारिक कला का प्रभाव अधिक दिखाई देता है। मथुरा, सारनाथ तथा अजंता में मूर्ति कला का प्रसार धार्मिक संरक्षण की सीमा में हुआ, किन्तु मध्य देश के मूर्तिकार अपनी स्वतंत्रता का बोध कराते है। बाघ की गुफा चित्रकला में लोकशैली का विकास हुआ दिखाई दे

रहा है। मध्य देश में बनी पशु, पक्षियों, लता बल्लरियों, पुष्पलताओं एवं आकृतियों में अजंता की वाकाटक कालीन कला का भी प्रभाव दिखाई देता है।[12] गुप्तकाल में बनाए गये मन्दिरों के तोरण द्वारों पर बनी कूर्मवाहिनी गंगा एवं मकर वाहिनी यमुना की मूर्तियाँ बहुत ही मनोहारी है। इन मूर्तियों में लोकशैली स्पष्ट रूप से परिलक्षित हुई है। अगर हम तुलनात्मक दृष्टि से अध्ययन करें तो नचना कुठार के पार्वती मन्दिर के तोरण द्वारा पर बनी गंगा एवं यमुना की मूर्तियों तथा नागोद के मन्दिर के तोरण द्वार पर गंगा एवं यमुना की मूर्तियों में परम्परा का भाव परिलक्षित होता है। संस्कृति के महाविद्वान, महाकवि कालिदास के काव्यों एवं नाटकों में वर्णित अनेक भावों को स्पष्ट करने वाली मूर्तियों एवं अभिप्रायों का उल्लेख डॉ0 वासुदेवशरण अग्रवाल ने किया है।[13] इस समय के कलाकारों की विचारधारा विस्तृत थी। समाज में विभिन्न वर्गों के प्रचलित धार्मिक विश्वास को मूर्तिकार ने अपनी तक्षण (मूर्तिकला) कला में बखूबी उतारा गया था।

दक्षिण भारत में गुप्तों का प्रभाव कम था फिर भी 5वीं, छठीं सदी ई0 की मूर्तिकला पर गुप्त मूर्तिकला का प्रभाव दिखाई पड़ता है। ये मूर्तियाँ विदेशी प्रभाव से मुक्त हैं। इन पर पूर्ण रूप से भारतीयता दिखाई पड़ती है। इन मूर्तियों पर रूप सौष्ठव एवं आध्यात्मिक सौन्दर्य का बोध एक साथ दिखाई देता है।[14] अजंता एवं कन्हेरी की गुफा मूर्तियों में बुद्ध की भारी भरकम, चौड़े अनुपात वाली मूर्तियाँ मिली है। गुप्त काल से पूर्व ये मूर्तियाँ स्वतंत्र रूप में थी किन्तु गुप्तकाल में इन्हें दृश्यों का भाग बनाया जाने लगा। इस काल की मूर्तियों की मुख्य विशेषता थी, उनकी भारी साज सज्जा एवं वस्त्रों का सोद्देश्य अंकन।[15] गुप्तोत्तर काल में अजंता में वस्त्रों का अंकर रूढ़िवादी हो गया एवं मूर्तियों में प्रभामंडल का मनोहर रूप दिखलाई पड़ता है। अजंता में बौद्ध धर्म के महायान सम्प्रदाय से सम्बन्धित गुफाओं में तिथि की समस्या काफी विवादास्पद प्रतीत होती है। वाल्टर स्पिंक इन गुफाओं की चित्रकला का तादात्म्य वाकाटक शासक हरीषेण (462 ई0– 480 ई0) से करते हैं। उनके अनुसार बाघ में इस कालखण्ड में 9 गुफाओं का उत्खनन कार्य किया गया। ओडेटविनों ने अजंता गुफाओं की मूर्तिकला को पांचवीं सदी के उत्तरार्ध का माना है।

गुप्तकाल में पश्चिमी भारत की मूर्तिकला से अछूता नहीं रहा। यहाँ पूर्व मध्य काल तक ऐसी मूर्तियाँ बनती रही जिन पर गुप्त काल की मूर्ति निर्माण कला का प्रभावदृष्टिगोचर होता है। राजस्थान एवं गुजरात के कई क्षेत्रों से बहुतायत मात्रा में मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं जो गुप्तकाल में निर्मित की गयी थी। पश्चिमी मूर्तिकला शैली का उल्लेख तारानाथ के विवरण में भी मिलता है।

इस प्रकार गुप्त काल जो अपने शासकों की कल्याणकारी नीतियों धार्मिक सहिष्णुता, विज्ञान एवं प्रोद्यौगिकी तथा शैक्षणिक उन्नयन के साथ ही साथ मूर्ति कला के विकास को भी सिद्ध करता है। इस काल में मन्दिर वास्तुकला का उद्भव एवं विकास एक प्रमुख घटना था। सर्वप्रथम ईंट के मन्दिर गुप्त काल में ही बने। मूर्ति कला का विकास वैष्णव, शैव, बौद्ध एवं जैन मूर्तियों के रूप में धार्मिक विश्वास को प्रकट करता है, साथ ही साथ शासकों की धार्मिक सहिष्णुता का भी परिचय देता है। इसीलिए गुप्तकाल को विद्वान इतिहासकारों ने प्राचीन भारत का स्वर्ण काल कहा।[16]

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. स्थापत्य एवं कला– वासुदेव शरण अग्रवाल पेज नं0 175
2. मन्दिर वासुकला– डा0 रूदल प्रसाद यादव पेज– 108
3. क्लासिक कला शैली– डा0 रमानाथ मिश्र पेज–166
4. गुप्तयुगीन कला– डा0 रमानाथ मिश्र पेज–167
5. हरिनाथ द्विवेदी द्वारा लिखित ग्वालियर राज्य में प्राचीन मूर्तिकला पे0 690
6. ग्वालियर राज्य में प्राचीन मूर्तिकला पेज नं0 698
7. आर0आर0 त्रिपाठी, इण्डियन म्यूजियम बुलेटिन पेज नं0– 62
8. एच0 हरग्रीव्ज– आर्किलोजिकल सर्वे आफ इण्डिया, वार्षिक रिपोर्ट 1914–15 पेज नं0 124–126, 130–131
9. जी0एस0घई– एपिग्राफिया 37 (1970) पेज– 46–49
10. आर0एन0 मिश्र का लेख पेज– 181–186
11. के0सी0 पाणिग्रही–दि आर्किलाजिकल रिमेंस भुवनेश्वर पेज नं0 125–126
12. भारत कला भवन से प्रकाशित 'छवि' में प्रकाशित वाल्टर स्पिक के लेख से
13. स्थापत्य एवं कला– डॉ0 वी0एस0 अग्रवाल पेज– 220–223

14. कुमार स्वामी– हिस्ट्री आफ इण्डियन एवं इंडोनेशियन आर्ट पेज–71
15. एम0जी0 दीक्षित– इण्डिका (1971) पेज–6–8
16. डॉ0 के0सी0 श्रीवास्तव– प्राचीन भारत का इतिहास पेज नं0– 478–483